Dr. Vandana Suman
Associate Professor
Dept. of Philosophy
H. D. Jain College, Ara
B. A. Part - 1 (Hons)
Paper - I
Indian Philosophy

"Buddha: doctrine of Nirvana."
(बौद्ध - दर्शन में निर्वाण)

भारत के अन्य दर्शनों में जिस सत्ता को 'मोक्ष' कहा जाता है, उसी सत्ता को बौद्ध-दर्शन में 'निर्वाण' की संज्ञा से विभूषित किया गया है। बुद्ध के तृतीय आर्य-सत्य में दुःख निरोध के बारे में हमें बताये हैं, इसे ही 'निर्वाण' कहते हैं। बौद्ध-दर्शन में 'निर्वाण' को जीवन का चरम लक्ष्य माना गया है।

निर्वाण की प्राप्ति जीवन-काल में भी हो सकती है। क्योंकि यदि व्यक्ति अपने जीवन काल में ही राग द्वेष, मोह, आसक्ति अहंकार इत्यादि पर विजय पा लेता है, तब वह मुक्त हो जाता है। वह संसार में रहकर भी सांसारिकता से निर्लिप्त रहता है। निर्वाण प्राप्ति के बाद शरीर का नाश तुरन्त नहीं हो जाता है क्योंकि शरीर पूर्व जन्म के कर्मों का फल है। जब तक ये कर्म समाप्त नहीं होते हैं, शरीर विद्यमान रहता है। बुद्ध की यह धारणा उपनिषदों के जीवन-मुक्ति से मेल खाती है। बौद्ध दर्शन के कुछ अनुयायी जीवन मुक्ति और विदेह मुक्ति की तरह निर्वाण और परिनिर्वाण में भेद करते हैं। परिनिर्वाण का अर्थ है मृत्यु के उपरान्त निर्वाण की प्राप्ति। बुद्ध को परिनिर्वाण की प्राप्ति अस्सी वर्ष की अवस्था में हुआ

जब इनका देहान्त हुआ। अतः निर्वाण का अर्थ जीवन का अन्त नहीं है अपितु यह एक ऐसी अवस्था है जो जीवनकाल में ही प्राप्त है

निर्वाण निष्क्रियता की अवस्था नहीं है। निर्वाण प्राप्त करने के लिए एक व्यक्ति को सभी कर्मों का त्याग कर बुद्ध के चार आर्य सत्यों का मनन करना पड़ता है। परन्तु जब ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है तब उसे कर्मों से अलग रहने की आवश्यकता नहीं महसूस होती। इसके विपरीत वह लोककल्याण की भावना से प्रेरित होकर कार्यान्वित दिख पड़ता है। बुद्ध का सारा जीवन कर्म का अनोखा उदाहरण रहा है। अतः निर्वाण का अर्थ कर्म-सन्यास समझना भ्रान्तिमूलक है।

यहाँ पर एक आक्षेप किया जाता है कि - यदि निर्वाण प्राप्त व्यक्ति संसार के कर्मों में भाग लेते हैं तो किये गये कर्म संस्कार का निर्माण कर उस व्यक्ति को बन्धन की अवस्था में क्यों नहीं बाँधते।

इसके उत्तर में बुद्ध ने कहा है कि कर्म दो प्रकार के होते हैं।

(1) आसक्त कर्म - यह राग द्वेष तथा मोह से संचालित होता है। इस कर्म के फलस्वरूप मानव को जन्म-ग्रहण करना पड़ता है।

(2) अनासक्त कर्म यह राग द्वेष तथा मोह से रहित होता है तथा इस कर्म को मनुष्य संसार को अनित्य समझ कर

जाता है जिसके कारण उसे जन्म ग्रहण नहीं करना पड़ता है।

तुलना इस प्रकार के कर्मों की तुलना बुद्ध ने भुने हुए बीज से की है जो पौधों की उत्पत्ति के असमर्थ होता है। आसक्त कर्म की तुलना बुद्ध ने ~~उत्पादक~~ बीज से की है जिसके बोने से पौधे की उत्पत्ति होती है। जो उसकिन्त निर्वाण को अपनाते है, उनके कर्म अनासक्ति की भावना से संचालित होते हैं। इसीलिए कर्म करने के बावजूद भी उन्हें कर्म के फलों से छुटकारा मिल जाता है। बुद्ध का अनासक्त कर्म - भावना से मिलता जुलता है।

बुद्ध ने निर्वाण के सम्बन्ध में कुछ नहीं बतलाया। जब भी उनसे निर्वाण के बारे में पूछा जाता था वे मौन हो जाते थे उनके मौन रहने के फलस्वरूप निर्वाण के सम्बन्ध में विभिन्न धारणायें विकसित हुई। निर्वाण के शाब्दिक अर्थ को लेकर विद्वानों दो दल हो गया। इन दो दलों के साथ ही साथ निर्वाण के सम्बन्ध में दो मत हो गए।

1. निषेधात्मक मत

2. भावात्मक मत

निषेधात्मक मत - के समर्थकों ने निर्वाण की तुलना दीपक के बुझ जाने से की

जिस प्रकार दीपक के बुझ जाने से प्रकाश का अन्त हो जाता है उसी प्रकार निर्वाण प्राप्त करने के बाद व्यक्ति के समस्त दुःख मिट जाते हैं। इन लोगों के कथनानुसार निर्वाण प्राप्त करने के बाद व्यक्ति के आत्-तत्व का विनाश हो जाता है। इस मत के समर्थकों में ओल्डेनबर्ग, बौद्ध-धर्म के हीनयान सम्प्रदाय तथा चाइल्डर्स का नाम विशेष उल्लेखनीय है। निर्वाण का यह निषेधात्मक मत तर्क-संगत नहीं है।

यदि हम यह मान लें कि निर्वाण का अर्थ जीवन का अन्त है तब यह कैसे कहा जा सकता है कि मृत्यु के पूर्व बुद्ध ने निर्वाण को अपनाया। बुद्ध का सारा उपदेश इस बात का प्रमाण है कि उन्होंने मृत्यु के पूर्व ही निर्वाण को अपनाया था। यदि इस विचार का खण्डन किया जाय, तब बुद्ध के सारे उपदेश एवं उनके निर्वाण प्राप्ति का विचार कल्पना मात्र हो जाते हैं। अतः निर्वाण का अर्थ जीवन का अन्त समझना गलत है। प्रो० मैक्समूलर और चाइल्डर्स ने निर्वाण-विषयक वाक्यों का सतर्क अध्ययन करने के बाद यह निष्कर्ष निकाला है कि निर्वाण का अर्थ कहीं भी पूर्ण-विनाश नहीं है।

2. भावात्मक मत :— के समर्थकों के अनुसार निर्वाण का अर्थ वासना एवं दुःख रूपी आग का ठन्डा हो जाना है। बुद्ध

LIC

विद्वानों ने निर्वाण को आनन्द की अवस्था कहा है। इस मत के माननेवालों में प्रो. मैक्स मूलर, चाइल्डर्स, राइस डेविड्स, डाक्टर राधाकृष्णन, पूसिन इत्यादि का नाम विशेष उल्लेखनीय है। पालीग्रन्थ में भी निर्वाण को आनन्द की अवस्था माना गया है। धम्मपद में निर्वाण को आनन्द, परम सुख, पूर्ण शान्ति तथा लोभ, घृणा और भ्रम से रहित अवस्था कहा गया है। निब्बानं परमं सुखम्। अंगुत्तर निकाय में निर्वाण को आनन्द एवं पवित्रता के रूप में चित्रित किया गया है। निर्वाण को आनन्दमय अवस्था मानने के फलस्वरूप कुछ विद्वानों ने बौद्ध-दर्शन पर सुखवाद का आरोप लगाया है। इनका यह आरोप गलत है। क्योंकि आनन्द की अनुभूति सुख की अनुभूति से भिन्न है। सुख की अनुभूति अस्थायी दुःखप्रद है परन्तु आनन्द की अनुभूति अमृत तुल्य है।

निर्वाण का सत्य स्वरूप यह है कि यह अनिर्वचनीय है। बौद्ध धर्म के प्रमुख धर्मोपदेशक नागसेन ने यूनान के राजा मिलिन्द को निर्वाण की व्याख्या उपमाओं की सहायता से की है। निर्वाण को उन्होंने सागर की तरह गहरा, पर्वत की तरह ऊँचा और मधु की तरह मधुर कहा है। निर्वाण के स्वरूप का ज्ञान उसे ही हो सकता है जिसने इसको

अनुभूति प्राप्त है।

जितनी परिभाषाएँ इस प्रकार निर्वाण की दी गई हैं वे निर्वाण के यथार्थ स्वरूप को बतलाने में असफल हैं।

निर्वाण की प्राप्ति मनुष्य के लिए लाभप्रद होता है। इसमें मुख्यतः तीन लाभ प्राप्त होते हैं — 1. दुःखों के समस्त कारणों का अन्त कर निर्वाण मानव को दुःखों से मुक्त दिलाती है।

2. जन्म-ग्रहण के कारण नष्ट हो जाने से निर्वाण प्राप्त व्यक्ति जन्म-ग्रहण के बन्धन से छुटकारा पा जाता है।

3. निर्वाण प्राप्त व्यक्ति का शेष जीवन शान्ति से बीतता है। निर्वाण से प्राप्त शान्ति आनन्ददायक होता है।

अतः बुद्ध-दर्शन के अनुसार निर्वाण की प्राप्ति ही जीवन का उद्देश्य है।